श्रीनिवास बालभारती

श्रीकृष्ण चैतन्य

हिन्दी अनुवाद

डॉ. वी. जगन्नाथ रेड्डी

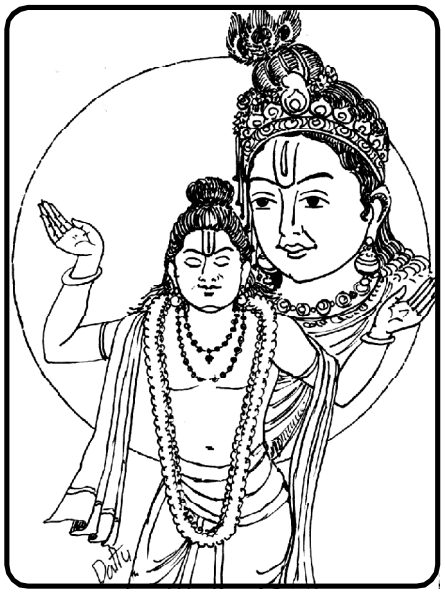

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

श्रीनिवास बालभारती - 170

श्रीकृष्ण चैतन्य

तेलुगु मूल

डॉ. वै. वी. रमण राव

हिन्दी अनुवाद

डॉ. वी. जगन्नाथ रेड्डी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2015

Srinivasa Bala Bharati - 170
(Children Series)

SRI KRISHNA CHAITANYA

Telugu Version
Dr. Y. V. Ramana Rao

Hindi Translation
Dr. V. Jagannath Reddy

T.T.D. Religious Publications Series No. 1118
©All Rights Reserved

First Edition - 2015

Copies : 5000

Price :

Published by
Dr. D. SAMBASIVA RAO, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Office of the Editor-in-Chief
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati.

दो शब्द

बच्चों का हृदय सुमनों की भांति निर्मल होता है। उत्तम कपूर से बढ़कर सुवासित उन के दिलों में बढिया संस्कार पैदा करना है। यदि उन में हम अच्छे संस्कार डालते हैं तो चिरकाल तक आदर्श जीवन बिताने के लिए सुस्थिर नींव पड जाती है। बचपन में संस्कार प्राप्त बच्चे भावी पीढियों के लिए समुचित मार्ग दर्शन कर सकते हैं। इसलिए हमारे इन होनहार बच्चों के लिए हमारी विरासत बने पौराणिक मूल्यों तथा इतिहास में निहित मानवता के मूल्यों का परिचय कराना अत्यंत आवश्यक है।

बिना लक्ष्य का जीवन निष्फल होता है। बच्चों को लक्ष्य की ओर प्रेरित कर उनके जीवन को सही मार्ग पर ले जाने की जिम्मेदारी बडों के ऊपर है। महान व्यक्तियों की आदर्शमय जीवनियों का परिचय करा कर उनमें प्रेरणा जगाने के उद्देश्य से 'श्रीनिवास बालभारती' का शुभारंभ किया गया है।

इस योजना का मुख्य लक्ष्य नैतिक मूल्यों के माधुर्य के बच्चों तथा सर्वत्र फैलाने का है। हमें यह जानकर अत्यंत आनंद हो रहा है कि बच्चे तथा परिवार के सभी लोग इन पुस्तकों का स्वागत कर रहे हैं। इससे तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् का मुख्य उद्देश्य कुछ हद तक सफल हो रहा है।

'श्रीनिवास बालभारती' की योजना तैयार करके उत्तम पुस्तकों का प्रकाशन करवा कर कम कीमत पर सब को उपलब्ध कराने का प्रयास, करनेवाले प्रो.एस.बी. रघुनाथाचार्य अभिनंदनीय हैं।

इस प्रकाशन में सहयोग देनेवाले लेखकों तथा कलाकारों के प्रति मैं अपना धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

कार्यकारी अधिकारी
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

प्राक्कथन

आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। अगर वे बचपन में ही महोन्नत सज्जनों की जीवनियों के बारे में जानकारी लें, तो अपने भावी जीवन को उदात्त धरातल पर उज्ज्वल रूप से जीने के मौके को प्राप्त कर सकते हैं। उन महोन्नत सज्जनों के जीवन में घटित अनुभवों से हमारी भारतीय संस्कृति, जीवन में आचरणीय मूल धार्मिक सिद्धान्तों तथा नैतिक मूल्यों आदि को वे निश्चय ही सीख सकते हैं। आज की पाठशालाओं में इन विषयों को सिखाने की संभावना नहीं है।

उपरोक्त विषयों को ध्यान में रखकर तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के प्रचुरण विभाग ने डॉ.एस.बी. रघुनाथाचार्य के संपादन में स्थापित ''बाल भारती सीरीस'' के अन्तर्गत विविध लेखकों के द्वारा तेलुगु में रचित ऋषि-मुनियों व महोन्नत सज्जनों की जीवनियों से संबंधित लगभग १०० पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया। इनका पाठकों ने समादर किया और इसी प्रोत्साहन से प्रेरित होकर अन्य भाषाओं में भी इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। प्रारम्भिक तौर पर इनको अंग्रेजी व हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया जा रहा है। इनके द्वारा बच्चे व जिज्ञासु पाठकों को अवश्य ही लाभ पहुँचेगा।

इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का उद्देश्य यही है कि बच्चे पढें और बडे लोग इनका अध्ययन कर, कहानियों के रूप में इनका वर्णन करें, तद्वारा बच्चों में सृजनात्मक शक्ति को बढा दें। फलस्वरूप बच्चों को अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा निश्चय ही बचपन में ही मिलेगी।

एडिटर-इन-चीफ
ति.ति.देवस्थानम्

स्वागत

श्रीनिवासदयोद्भूता बालानां स्फूर्तिदायिनी ।
भारती जयताल्लोके भारतीयगुणोज्ज्वला ।।

जब खण्डान्तरों में सभ्यता की बू तक नहीं थी तब भरतवर्ष अपनी सभ्यता, संस्कार,धर्म, नैतिकाचरण के लिए प्रसिद्ध हो गया था। जो इस पुण्य-भूमि पर जन्मता है वह धर्माचरण में स्थिर होकर अधर्म का सामना करता है और क्रमशः ईश्वराभिमुखी होकर यशोवान होता है। ऐसे महात्माओं के प्रभाव से हमारे जीवन इह-पर दोनों प्रकार लाभान्वित होते हैं। उनके आदर्शमय जीवनों से स्फूर्ति पाता है और समझता है कि मैं इस महान भारत का वारिस हूँ; परंपरागत इस संप्रदाय की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। ऐसी भावना से वह अपने देश की सेवा के लिए तैयार रहता है।

वास्तव में इस देश में कई धर्मात्मा, वीरपुरुष, वीरनारियाँ पैदा हुई उन्होंने संस्कृति की दृढ नींव डाली है। हमारा भाग्य यही है कि हमारी पैतृक-संपदा के रूप में उज्ज्वल इतिहास की परंपरा है। उनके आदर्शों के पालन करने से ही कोई विद्यावान-विज्ञानी बन सकता है। राष्ट्र के जीवन प्रवाह में वही विज्ञान अचल रहकर जीवन को सुशोभित करता रहता है। इसी सिलासले को आगे बढाने के लिए महात्माओं के जीवनियों को संक्षिप्त रूप में आपके सामने रखता हूँ।

हे भारत के भाग्यदाता बालक-आइए-स्फूर्ति पाइए

एस.बी. रघुनाथाचार्य
प्रधान संपादक

परिचय

नादान जनता मूर्ख मुष्करों के हाथ में फँसकर अनेक यातानाओं को झेल रही है। सांप्रदायिक विद्वेषाग्नि में मानवता भस्म हो रही है। समाज का हृदय ज्वलित हो रहा है। इस अशान्ति का शमन करने और जनजीवन वाहिनी को जनार्धनाभिमुख करने के लिए प्रेमामृत धाराओं को बरसाते हुए भक्ति भावना से भारतवर्ष को भव्य रूप प्रदान करने और चैतन्यवान बनाने राधामाधव रम्य अवतार को स्वीकारते हैं। उनके बारे में प्रचार प्रसार करने के लिए जन्मे वह महानुभाव कौन है? आप जानते हैं?

कृष्ण चेतना से जनता की सभी तृष्णाओं को दूर करनेवाले सार्थक नामधेय श्रीकृष्ण चैतन्य।

पिता के द्वारा रखा गया नाम विश्वम्भर है तो माता उसे प्रेम से 'निमाई' कहकर पुकारती है। बचपन से ही अनेक महिमाएँ और अद्भुत घटनाएँ इसके जीवन में घटती है। हरिनामामृत का आस्वादन करके, अखंडानंद प्राप्त करने के लिए 'हरि बोल हरि बोल' कहते हुए आसेतुहिमाचल भ्रमण करके बतानेवाले महाभक्त हैं। नाम संकीर्तन करने मात्र से ही तन्मय होकर निरंतर आँखों से आनंदाश्रुधाराओं को प्रवाहित करनेवाले कुसुम कोमल मन है उनका।

विरक्त होकर सन्यासी बनकर तीर्थयात्राएँ करते हुए देश के चारों ओर कृष्ण चेतना को व्याप्त करने के लिए अपने जीवन को समर्पित कर कृष्ण चैतन्य नाम से प्रसिद्धि पानेवाले उनकी निर्मल भक्ति निस्वार्थ सेवानिरति आज हमारे लिए मार्गदर्शक होना चाहिए।

- प्रधान संपादक

श्री कृष्ण चैतन्य

और कोई मार्ग नहीं है :

तेलुगु का लिप्यांतरण	**हिन्दी का रुपांतरण**
हरियनु रेंडक्षरमुलु	हरि नामक दो अक्षर
हरिइंचुनु पातकमुल नंबुजनाभा	पापों का हरण करते हैं अंबुजनाभा
हरि नी नाम महत्वमु	हरि तुम्हारा नाम महत्व
हरियनि बोगडंग वसमें हरि श्रीकृष्ण।	हरि कहकर प्रशंसा करने से प्राप्त है हरि श्रीकृष्ण।

यह कृष्ण शतक का पद सब के लिए सुपरिचित है। कृष्ण शतककार ने कहा है कि हरि नाम स्मरण ही पापनिर्मूलन का महा मंत्र है। ठीक इसी भाव को व्यक्त किए हैं देश के प्रत्येक प्रान्त के भक्त। उत्तर भारत में इस विश्वास को व्याप्त करनेवाले हैं श्रीकृष्ण चैतन्य। उनके विश्वास का एक मात्र सूत्र है -

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्तयेव नास्तयेव नास्तयेव गतिरन्यथा।।
अर्थात् कलियुग में हरि नामस्मरण के बिना मुक्ति के लिए और कोई मार्ग नहीं है।

महानुभावों के जीवन कई मोड लेते हुए कई दिशाएँ बदलते हुए आसक्तिजनक और आनंददायक होते हुए अच्छाई को पहचानने और मार्ग दिखाने के लिए होते हैं। चैतन्य महाप्रभु का जीवन भी इसी प्रकार का है।

उस समय का नवद्वीप ही आज का नदिया

भारत का पूर्वी भाग नव चेतना के लिए प्रमुख स्थान है। पूर्वी राज्यों में बंगाल और बिहार बडे हैं। आज का बंगाल का प्रान्त पूर्वकाल में अनेक प्रदेशों के रूप में पहचाना जाता था। उस प्रदेश के उत्तर भाग को गौड देश के रूप में, पूर्वी प्रदेश को वंश के रूप में पश्चिमी प्रदेश को राढ़ प्रदेश के रूप में, व्यवहार करते थे। बंग प्रदेश को छोडकर बाकी प्रांत को गौड देश भी कहते थे। उस प्रदेश में आज के कलकत्ता नगर की उत्तर दिशा में नव द्वीप नामक नगर था। उस नगर का आज का नाम है नदिया। आज यह एक जिला केन्द्र भी है।

धर्मपरिवर्तन के बिना अस्तित्व शून्य है

नदिया जब नवद्वीप था तब बडा विद्याकेन्द्र भी था। वह ईसा के 15 वीं शताब्दी की बात थी। उससे पहले ही भारत पर मुसल्मानों के अनेक आक्रमण हुए। साथ ही मुसल्मान शासक बहुत शक्तिवान हो गये हैं। हिन्दुओं को बलपूर्वक धर्मपरिवर्तन कर रहे थे। नहीं मानने से जान भी लेते थे। बहुत से हिन्दू, प्राण भय के कारण मुसल्मान धर्म को स्वीकार कर रहे थे। यही नहीं उच्च जाति के माने जाने वाले हिन्दू लोग भी एक तरफ निम्न जाति के लोगों पर अत्याचार कर रहे थे। इस प्रकार समाज में पूरी निराशा छा गयी थी।

तभी अवतार लूंगा

ऐसी निराशाजनक स्थितियों में जनता में भी भगवान पर विश्वास कम हो गया है। निम्न जातियों और बलहीन लोग विजेताओं के धर्म को स्वीकार किये और क्या कर सकते थे। उसी समय तक महम्मद गजिनी

और गोरी के आक्रमण हुए थे। उन आक्रमणों से जनता कुछ भी निर्णय ले नहीं पायी। छोटे बडे राजवंश सभी अनेक कारणों से निर्वीर्य हो रहे थे। आम जनता के द्वारा विश्वस्त और पूजित देवताओं के मन्दिर और मूर्तियाँ मुसल्मानों के द्वारा तोडे जा रहे थे। इस्लाम धर्म को स्वीकारे लोग और अन्य भी असीम मानसिक व्यथा का अनुभव कर रहे थे। धर्म पूर्ण रूप से नाश हो रहा था।

भगवान गीता में स्पष्ट कहा था कि ऐसी स्थितियों में ही मैं अवतरित हूँगा।

कृष्ण भगवान ने आश्वासन दिया है कि जब धर्म के लिए हानी होगी और अधर्म का भंडाफोड होता है तभी मैं अवतार लेकर सज्जनों की रक्षा करूँगा और दुष्टों का संहार करके धर्म की स्थापना करता हूँ। और यह भी कहा है कि इस प्रकार अवतार लेना हर युग में होगा भी।

आज भी बहुत सारे लोगों का विश्वास है कि इसीलिए श्रीकृष्ण भगवान कृष्ण चैतन्य बनकर अवतरित हुए हैं।

जन्म

श्रीकृष्ण चैतन्य का जन्म ई.के 1485 में फागुन महीने के पूर्णिमा के दिन नवद्वीप में हुआ था। उस दिन संपूर्ण चंद्रग्रहण भी था। उनके पिता श्रीजगन्नाथ मिश्र थे। वे नवद्वीप में बडे विद्वान के रूप में विख्यात थे। माता शची देवी थी। नवद्वाप के विद्वान नीलांबर चक्रवर्ती की पुत्री थी। कृष्ण चैतन्य उन पुण्य दंपतियों का दसवाँ संतान था। पहले जन्मे आठ लोगों के मरने के बाद नौवी संतान के रूप में जन्म लिया था विश्वरुप और दसवाँ चैतन्य।

बहुत दिनों के बाद स्वग्राम में

जगन्नाथ मिश्र का पिता उपेन्द्रमिश्र श्रीहट्ट प्रदेश में रहता था। न्याय शास्त्र पढ़ने जगन्नाथ मिश्र नवद्वीप आया था। वहीं उनका विवाह भी हुआ था और बस भी गये। फिर से अपने माता पिता के पास नहीं गया था। उनके माता पुत्र के पण्डित होने और गृहस्थी होने से आनंद का अनुभव किये थे। लेकिन बच्चे जन्म लेकर मरते रहने से बहुत ही दु:खी थे। नौवी सन्तान के रूप में विश्वरुप का जन्म हुआ था। सिर्फ वही बचा था। वह कुछ बडा होने के बाद उपेन्द्र मिश्र ने सपरिवार आने के लिए सूचना भेजा जगन्नाथ मिश्र को। बहुत दिनों के बाद अपने माता पिता की इच्छा के अनुसार जगन्नाथ मिश्र पत्नी और बच्चे के साथ अपने जन्म स्थान श्रीहट्ट प्रदेश पहुँचा था। उसी समय शची देवी गर्भवती थी।

शीघ्र भेज दीजिए

एक दिन जगन्नाथ मिश्र की माता को एक स्वप्न आया था। उस स्वप्न में एक अत्यंत तेजस्वी महापुरुष दर्शन देकर कहा - ''मैं आपके पौत्र के रूप में जन्म लेने वाला हूँ। लेकिन यह मेरा जन्म स्थान नहीं होना है। इसलिए आप अपने पुत्र और पुत्रवधू को तुरंत नवद्वीप भेज दीजिए।'' उन्होंने दैवाज्ञा का पालन करते हुए अपने पुत्र और पुत्र वधू को नवद्वीप जाने का आदेश दी थी। भगवान ही उन्हें दूसरे सन्तान के रूप में होनेवाला है, ऐसा सोचते हुए बहुत ही आनंद का अनुभव करता था जगन्नाथ मिश्र। माता के आदेश को भगवदादेश मानकर नदिया वापस चला जाता था।

डरो मत - महापुरुष जन्मेंगे

नदिया जाकर पुत्र के जन्म के लिए सब लोग इन्तजार कर रहे थे। नवमाह पूरा होने पर भी प्रसव नहीं हुआ था। दसवाँ महीना भी पूरा होने लगा। लेकिन प्रसव नहीं हुआ था। सब लोग डर गये थे। फिर भी शचीदेवी के पिता नीलांबर चक्रवर्ती पूर्व स्वप्न वृत्तांत को याद दिलाते हुए सब को शान्त कर रहा था। ज्योतिष ज्ञानी के रूप में प्रश्नकुंडली की गणना करके अपने कथन के लिए आधार दिखाया था।

वैसे तो सही समय के आने तक अवतारपुरुष जन्म लेंगे तो नहीं। दिव्यपुरुषों के जन्म समय के साथ कोई महत्तर विशेष भी जुडा रहना चाहिए। इसीलिए वह दिन फागुन महीने का पूर्णिमा हो गई थी और चंद्र ग्रहण का पर्व दिन भी था। उस दिन पूर्णतेजस्वरूप और दिव्यांशसम्भूत महापुरुष का जन्म दिन भी हुआ था। भगवान श्रीकृष्ण का जन्म भी अष्टमी के दिन आधीरात को हुआ था। और उस समय भयंकर वर्षा भी हो रही थी और नदियाँ उधृत रूप में प्रवाहित हो रही थीं।

'विश्वम्भरा' कहते हुए पिता; और 'निमाई' कहते हुए माता

जगन्नाथमिश्र और शची देवी के लिए द्वितीय पुत्र के रूप में जन्में उस बालक का नामकरण विश्वम्भरमिश्र करके किया गया था। वह नाम भी सार्थक नाम था। साधारण बच्चों से रूप और वर्ण में विश्वम्भर सुंदर आकर्षक दिख पडता था। उसकी सुंदरता और तेजस से सब लोग प्रभावित हो रहे थे। इसीलिए सब लोग उसे 'गौर हरि' कहकर पुकारते थे, अर्थात् गोरा कृष्ण। पिता के द्वारा रखा गया नाम 'विश्वम्भर' है तो माता के द्वारा रखा गया नाम 'निमाई'। यह उसका लाडका नाम था। गोरे वर्ण शरीर के होने से कुछ लोग उसे 'गौरंग' भी कहते थे। लेकिन माता के द्वारा रखा गया नाम ही बहुत दिनों तक व्यवहार में रहा था।

उस पर कोई प्रभाव नहीं होगा

पुष्पित होते ही अच्छा फूल जैसे सुगंध फैलाता है वैसे भगवान श्रीकृष्ण ने भी दूध पीते समय ही अनेक चमत्कार दिखाया था। उन चमत्कारों से डरकर माता यशोदा अनेक मंत्र - तंत्रों के सहारे दृष्टिदोष निवारण के उपाय करती थी। ऐसी ही अनेक घटनाएँ भी निमाई के बचपन में हुई थीं।

एक दिन माता शची देवी बच्चे के पास गयी थी। बच्चे के इर्दगिर्द एक ज्योति वलय को देखी थी। उस ज्योति को देखकर माता का डरना सहज था। उनका भ्रम था कि कोई भूत या प्रेत बच्चे को आवाह कर लिया। यही बात उन्होंने अपने पति से भी बताया था। लेकिन जगन्नाथ मिश्र उन्हें सांत्वना देते हुए कहा था - ''हमारा बच्चा दिव्यांश संभूत है और उस पर कोई प्रभाव न पडेगा।''

हरिनाम संकीर्तन से रोना बन्द

एक दिन बच्चा भयंकर रूप से रोने लगा था। कितने भी उपचार और समाधान करने पर भी उसने रोना बन्द नहीं किया था। कुछ समझ में न आने से माता बच्चे को झूले में डालकर विष्णुनाम संकीर्तन गाना शुरु की थी। तुरंत बच्चे का रोना बन्द हो गया था। तब से विष्णु नाम संकीर्तन रोनेवाले बच्चे को समाधान करने का महामन्त्र हो गया था। कोई अन्य गाना गाने पर भी बालक निमाई रोना बन्द नहीं करता था।

मुझे अभी वे मिठाइयाँ चाहिए

निमाई कुछ बड़ा हो गया था। जिद्द करने की उम्र थी। एक दिन उस गाँव के पण्डित के घर पर एकादशी व्रत मनाया जा रहा था। भगवान

को नैवेद्य चढ़ाने के लिए कुछ मिठाइयाँ बनाई गयी थीं। लेकिन बालक निमाई अपनी माता से कहा था कि उन्हें तुरंत मिठाइयाँ चाहिए। भलें ही अपने लाडले के लिए कोई माता पडोस के घर जाकर भगवान के नैवेद्य के लिए बनाये गये पकवान कैसे पूछ सकती? लेकिन निमाई ने नहीं सुना। आस-पडोस के लोग सुनकर निष्ठुर होने लगे थे। उसी समय एक विस्मयकारी घटना हुई थी। वहाँ पण्डित के घर पर नैवेद्य के रूप में भगवान के सामने रखे गये पकवानों को निमाई स्वीकारने का दृश्य आविष्कृत हुआ था। बस ऐसे में वह गृहस्थ ने तुरंत वहाँ जमें सभी भक्तों से कहा - ''उठिए! उठिए प्रत्यक्ष दैवस्वरुप को ही हम नैवेद्य समर्पित करेंगे।'' अपने सामने रखे गये पकवानों में से निमाई ने कुछ खाया कुछ फेंक दिया और कुछ चीजों को अपने शरीर पर लगाया। बाल सहज चेष्टाएँ होने पर भी सब लोग सम्भ्रम से देखते ही रह गये थे।

निमाई महापुरुष बनेगा

एकदिन किसी और के घर में नैवेद्य के रूप में रखी गयी चीजों को भी जूठन करके आया था। इसके बारे में सब लोग माता से शिकायत करके निष्ठुर हो जाते थे। उस घटना के बारे में शची देवी अपने बडे बेटे से बतायी थी। तब निमाई से दस साल बडा विश्वरुप ने माता से इस प्रकार कहा था - ''माँ! हमारा निमाई सामान्य नहीं है। चिन्ता मत करो।'' उन्होंने यह भी कहा था कि एक न एक दिन वह महापुरुष बनेगा।

नृत्य करो बेटा : देखना है

पाँच साल की उम्र में ही आस-पडोस के बच्चों के मध्य में जाकर मुख्यतः लडकियों के बीच में जाकर, पूरी तन्मयता के साथ लडकियाँ गाती रहती हैं तो नृत्य करने लगता था निमाई। मुख्यतः विष्णु नाम

संकीर्तन गाये जाने से निमाई और परवश होकर करनेवाले नृत्य भंगिमाएँ अत्यन्त आकर्षक होते थे। इकट्ठे हुए सब लोग आनन्द के साथ पुलकित हो जाते थे। बच्चों को बडों को आकर्षित करनेवाला बाल निमाई आगे जाकर ऐसी स्थिति तक पहुँच गया था कि सब उन्हें देखते ही कहते थे 'नाचो बेटा हम देखना चाहते हैं।' सहज ही उनमें यह भावना होती थी।

ऐसी अनेक घटनाएँ उसके बाल्यजीवन में थीं।

विश्वरुप का सन्यास ग्रहण

विश्वम्भर जब छः साल का था तब उससे दस साल बडा विश्वरुप संन्यास ग्रहण कर लिया था। विश्वरुप जब १६ साल का हुआ तभी माता-पिता उसकी शादी करना चाहते थे। लेकिन उस उम्र में ही प्रकाण्डपण्डित बने विश्वरुप को पारिवारिक बन्धनों में फँसना पसंद नहीं था। मुक्ति की इच्छा से उसी उम्र में ही विश्वरुप संन्यास ग्रहण कर लेता है। संन्यास ग्रहण करने के बाद संन्यासी अपने गाँव में या अपने गाँव में रहनेवाले अपने लोगों के बीच में नहीं रहना था। इसीलिए संन्यास ग्रहण करनेवाला विश्वरुप देशभ्रमण के लिए निकल पडता है। बडा बेटा संन्यासी बनने से बचा हुआ अकेला सन्तान विश्वम्भर माता पिता के लिए और प्यारा बन जाता है।

मुझे पढ़ायेंगे नहीं तो मैं क्या करुँ ?

विश्वरुप के संन्यासी बन जाने से पिता जगन्नाथ मिश्र डर गया था कि पढ़ाई कराने से यह भी सन्यासी बनकर आँखों के सामने से गायब हो जायेगा। इस डर के लिए पूर्व की घटनाएँ भी बहुत हद तक कारण

बन गये थे। इसीलिए युक्त उम्र आने पर भी निमाई को पाठशाला नहीं भेजा गया था।

निमाई भी क्या कर सकता था? नटखट बनकर इधर-उधर घूमने के सिवाय। बस उसने भी सब कुछ किया था जो बच्चे करते थे जैसे रसोईघरों में चोरियाँ, नींद में सोनेवालों को कोयले से मंदे बनाना, रास्ते में जानेवालों का खिल्ली उडाना, उसके लिए नियमित कार्य हो गये थे। इसके साथ नटखट बच्चों का नायकत्व भी उसी का था।

निमाई की नटखट चेष्टाओं को देखकर माता और भी डर जाती थी कि कहीं निमाई और बुरा हो जायेगा तो नहीं। एक दिन टूटे हुए विसर्जित पदार्थों के ढेर पर खपरैल के ऊपर के भस्म से बच्चों को मूंछ लगाते हुए काले रंग पूरे शरीर पर पोतकर दिखायी पडा था निमाई माता को। माता उसे दण्ड देने के लिए सोची थी। तब निमाई ने जवाब दिया था कि ''मैं ऐसा ही करूंगा। मुझे पढ़ने नहीं दिया तो मैं क्या करूँ?'' बच्चों के इस प्रकार पूछना बहुत ही आश्चर्यजनक बात थी। इसके बारे में सुने सब लोग जगन्नाथमिश्र को सलाह दिए थे कि विश्वम्भर का उपनयन कराकर विद्याभ्यास के लिए भेजना ही उचित होगा।

उपनयन : नयामोड

निमाई के जीवन में उपनयन एक नया मोड था। उपनयन के दिन गंगा स्नान के बाद पीताम्बरधारी बनकर ब्राह्मण अनुपम तेजस्वरुप के रूप में दिखाई पडा था सबको। शायद तब से ही निमाई 'गौर हरि' भी बन गया होगा। पिता के द्वारा ब्रह्मोपदेश पाया निमाई विचित्र रूप से हुँकार करते हुए बेहोश होकर गिर गया था। लेकिन उस ब्राह्मण की आँखों से अनन्त अश्रुवाहिनी प्रवाहित होने लगी थी। लेकिन मुख पर

अनंत तेजस् ओंठों पर दिव्य मुस्कान गायब नहीं हुआ था। वहाँ के लोग इस प्रकार बेहोश हुए कितनों को ही देखे थे। लेकिन इस रूप में सामने आयी निमाई की बेहोशी तो अद्भुत है।

उपनयन संस्कार से ही निमाई की नटखट चाल आश्चर्यजनक रूप से बन्द हो गया था।

कृति गंगार्पण हो गयी थी

ब्रह्मचारी निमाई तेज विद्यार्थी के रूप में प्रख्यात था। अपने १४ वें साल में ही 'कलापव्याकरण' की टीका की रचना किया था। अपने १५ वें साल में ही न्यायशास्त्र की अलोचना की रचना किया था। उस पाण्डित्यपूर्ण आलोचना को देखकर उसी जमाने के प्रसिद्ध न्यायशास्त्र पाण्डित 'रघुनाथ' भी जलने लगे थे। उसकी पीडा थी कि इस नवीन कृति से अपनी रचानाओं के लिए लायक गौरव नहीं मिल पायेगा। जब इस बात की जानकारी निमाई को हुई थी तुरन्त उन्होंने अपनी कृति को गंगार्पित करके साबित किया था कि समकालीन पण्डित को पीडा नहीं पहुँचाना है।

समर्थ अध्यापक

छोटी सी उम्र में ही अमित पाण्डित्य का आर्जित विश्वम्भर एक पाठशाला की स्थापना भी किया था। उस काल में नवद्वीप न्यायशास्त्र के लिए केन्द्र था। उनके पास न्यायशास्त्र का अध्ययन करने के लिए अनेक विद्यार्थी सुदूर प्रान्तों से आते थे। समर्थ आचार्य के रूप में हमेशा शिष्य समूह के साथ घूमते हुए उनके लिए आवश्यक ज्ञान देते हुए वह अपना जीवन बिताता था। अध्यापक रहते हुए ही अनेक पण्डितों को शास्त्रार्थ में उन्होंने हराया था। इस प्रकार वाग्विवाद प्रतियोगिता में

विश्वम्भर के हाथों में पराजितों में एक था दिग्वजयाब्धि आचार्य केशवजी, कश्मीरी जी।

प्रथम पत्नी लक्ष्मीप्रिया, द्वितीय पत्नी विष्णुप्रिया

विश्वम्भर के पिता का निधन उसके नौ साल की उम्र में हुआ था। शची देवी विश्म्भर को १६ वें साल में ही विवाह करायी थी। पति की मृत्यु के बाद बेटा संन्यासी बन जायेगा ऐसा डरती हुई अपने पूरे जीवन को बेटे की भविष्य के लिए ही अर्पित की थी। कीर्ति पा रहे बेटे को देखकर आनन्दित हो गयी थी माता। उस आनन्द में भाग लेने आयी लडकी थी लक्ष्मीप्रिया। माँ बेटे दोनों की पसन्द थी वह लडकी। वह लडकी पत्नी बनकर सास और पति की बहुत ही अनुगामी बनकर रहने लगी थी। सबको आकृष्ट करके कुछ ही दिनों में वह उस आनन्द को तीन दिन का आनन्द बनाते हुए चल बसी थी।

छोटी उम्र में ही पत्नी के मर जाने से निमाई पारिवारिक जीवन पर आसक्ति नहीं दिखाया था। लेकिन उसके गांभीर्य से लगता था कि वह विरक्त होनेवाला था। माता डर गयी थी। पुनर्विवाह के अनेक प्रयत्न हुए थे। तब तक दूसरों के मन को दुःख न पहुँचाने की स्थिति में पहुँचने से निश्चल रह गया था निमाई। माता लडकी को निश्चित करके अपनी इच्छा को प्रकट की थी। माता की इच्छा को न ठुकरा पाया था। बस द्वितीय पत्नी के रूप में उसके जीवन में आयी थी विष्णुप्रिया। तब उसकी आयु २० साल थी।

लेकिन तब तक पारिवारिक जीवन के माधुर्य से ज्यादा परमात्मिक भावना के लिए तत्पर था निमाई। हमेशा उसकी सोच उस अपूर्व अनुभूति की ओर दौडती थी।

पांडित्याभिमान भक्ति बन गयी थी

प्रथम पत्नी की मृत्यु ही निमाई की दृष्टि को भक्ति की ओर खींच दी थी। द्वितीय पत्नी के घर में आने के कुछ ही दिनों में एक दिन निमाई माता से कहा था -

''माँ! प्रयाग जाकर पिता के श्राद्ध कर्म कराने की इच्छा हुई आज्ञा दीजिए।'' मरे हुए पति को पुण्यलोक प्राप्ति के लिए प्रयाग में त्रिवेणी संगम के पास श्राद्ध कर्म करने जा रहे पुत्र को कैसे रोक सकती थी? 'हाँ' कर दी।

प्रयाग में पिंडप्रदान के बाद वहीं ईश्वरपुरी से संपर्क हुई थी। ईश्वरपुरी उस समय के विख्यात माधवेन्द्र पुरी का शिष्य था। महान विद्वान, भगवद्भक्त, संन्यासी और आध्यात्मिक संपन्न था। निमाई के लिए पूर्व परिचित भी था। उनका व्यक्तित्व, सौलन्य और पाण्डित्य विश्वम्भर को आकृष्ट किये थे। वह उनका शिष्य बन गया था।

तब से अपने पाण्डित्य के कारण आये हुए औद्धत्व, अशिष्ट व्यवहार निमाई में संपूर्ण रूप में अदृश्य हो गये थे। तब तक पण्डितों को हराने का कुछ गर्व उसमें था। लेकिन यह बदलाव उसे भगवान की ओर ले गयी थी। पाण्डित्याभिमान भगवद्भक्ति बन गयी थी।

भक्ति बीज को बढ़ाकर महावृक्ष बनाओ

प्रयाग यात्रा में निमाई वहाँ के सभी मन्दिरों का दर्शन किया था। उनमें भी मुख्यतः भगवान श्रीकृष्ण गयासुर के सिर पर रखे चरण चिह्नों का भी दर्शन किया था। वहाँ श्रीहरि के चरणों का दर्शन करते ही उनमें भक्तावेग निकल पडी थी। उस पल में उन्हें अनुभव हुआ था कि रसरुप परब्रह्म मूर्ति, गोपीवल्लभ, राधा मानस विलासी भगवान श्रीकृष्ण के

पादयुगल का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। बस उसी क्षण में वे चैतन्य बन गये थे। उस चैतन्यमय भावावेश में वे बाह्य चैतन को खो बैठे थे। उस समय मूर्छित निमाई को अपने जांघों पर लिटाते हुए उन्हें सांत्वना दिए महानुभाव ही थे ईश्वरपुरी। उसके बाद उन्हें दीक्षा दिए गुरु भी वे ही थे। दीक्षा दिलाने के बाद निमाई से ईश्वरपुरी उस प्रकार कहे थे - ''मेरे गुरुवर पूज्य माधवेन्द्र पुरी के द्वारा इस बंगभूमि में प्रवचित भक्ति बीज को महावृक्ष बनाने लायक समर्थ तुम ही हो।'' इतना ही नहीं, उस काम को स्वीकारने के लिए उन्हें प्रेरित भी किया था।

नवद्वीप हरिनाम से गूंज उठी

गया से वापस आने के बाद से उसमें विरक्ति की भावना ज्यादा हो गयी थी। घर पर दृष्टि नहीं थी। पाठशाला में बच्चों को पढ़ाने में उनका ध्यान कम होने लगी थी। पाठ पढ़ाते पढ़ाते बीच में अचानक हरिनाम स्मरण में या दैवध्यान में लीन हो जाते थे।

नवद्वीप प्रदेश में शाक्त सम्प्रदाय के अनुयायी रहते थे। उनमें हरिनाम कीर्तन का प्रचार करना आरम्भ किया था। नवद्वीप में घर घर में हरिनाम कीर्तन के अधिवेशन कराया था। आरम्भ में शाक्त सम्प्रदाय के अनुयायी और पुरानी परम्पराओं को न छोड पानेवाले विश्वम्भर की इस नयी पद्धति का निराकार किये थे। लेकिन धीरे धीरे इस नयी भक्ति पद्धति की सरलता और निराडम्बरता सबको आकृष्ट किये थे। इससे सम्पर्ण नवद्वीप हरिनाम संकीर्तन प्रतिध्वनियों से गूंज उठी।

निमाई सम्पूर्ण रूप से घर को भूलने लगा था। उसमें भावपूर्ण भक्ति के विकास होने के लिए केन्द्र बना था श्रीनिवास पण्डित का घर। श्रीनिवास पण्डित नवद्वीप में बडे नामी विद्वान थे। निमाई ईश्वरपुरी के

पास दीक्षित होने की बात सुनकर आनन्द का अनुभव करने वालों में वे प्रथम व्यक्ति थे। उनकी भक्ति माधुरी को और भक्ति मार्ग को खूब समझने वाले प्रथम भक्त थे वे। चैतन्य भक्ति मार्ग का प्रचार करने के लिए कटिबद्ध सहायक भी थे। चैतन्य से भी आयु में बडे होने पर भी उनके आन्तरंगिक के रूप में रहे थे।

श्रीचैतन्य के भजन कार्यक्रमों में नाम संकीर्तन के अलावा श्रीकृष्णलीलाएँ भी प्रधान थीं। श्रीकृष्ण का लीलाकेन्द्र था ब्रजभूमि। उसमें माधुर्य भक्ति के लिए आधार था बृन्दावन। गोपीमानसचोर के दिव्यशृंगार लीलाओं के लिए निलय था वह प्रदेश। उस दिव्यानुभूति को पाने के लिए उनके मन में बृन्दावन संदर्शन की इच्छा हुई थी। अपने पूरे जीवन वहीं पर बिताने के लिए सोचकर ही उन्होंने पहले ही संन्यास ग्रहण किया हो।

तुम भी भाई के रास्ते में हो ?

चैतन्यवान निमाई अपने २४ वें साल में ही ई. के १५०९ में माघ शुक्ल पक्ष में श्रीकेशव भारती के द्वारा संन्यास का ग्रहण किया था। संन्यासी निमाई ही श्रीकृष्ण चैतन्य था।

केसर वस्त्रधारी श्रीकृष्ण चैतन्य को देखकर माता और पत्नी दोनों विलाप की थीं। माता अपने आवेग को व्यक्त करते हुए कहने लगी थी - ''तुम भी अपने भाई की तरह सन्यासी बनकर मुझे और तुम्हारी पत्नी को आधाररहित बनाओगे और परित्याग करोगे?''

उसके लिए निमाई ने जवाब दिया - ''माता! आपकी आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म है। लेकिन मैं अपने धर्म का निर्वाह करने सन्यासी बन गया हूँ। इसलिए मैं न इस गाँव में, न रिश्तेदारों के बीच में रह सकता हूँ। इस विषय में आप जहाँ रहने की आज्ञा देंगी वहीं पर मैं रहूँगा।''

कुछ देर सोचने के बाद निकट रखने की अपेक्षा से माता सही प्रदेश के रूप में नीलाचल प्रदेश (आज के ओडिसा का जगन्नाथपुरी) में रहने की आज्ञा देती है। तब माता की आज्ञा के अनुसार पूरी पहुँच जाता है।

विचित्र भिक्षा

जगन्नाथपुरी जाने से पहले श्रीचैतन्य नवद्वीपवासियों से एक विचित्र भिक्षा की माँग किए थे। अपने पास इकट्ठा हुई जनता से उन्होंने इस प्रकार कहा था - ''भक्तों! आप लोग मुझे एक अमूल्यवान भिक्षा दे सकते हैं। आप सब लोग अपने - अपने घरों में श्रीकृष्ण नाम संकीर्तन कीजिए और हरिनाम महत्व को पहचानिए। श्रीकृष्ण भगवान की आराधना कीजिए।''

श्रीकृष्ण चैतन्य के साथ जगन्नाथपुरी पहुँचे लोगों में चार भक्त मुख्य थे। वे हैं नित्यानन्द गोस्वामी, जगदानन्द पण्डित, दामोदर पण्डित और मुकुन्द दत्ता।

अगर मेरा साम्राज्य प्रतिबन्ध है तो मैं छोड दूंगा

जब श्रीचैतन्य पूरी पहुँचे थे उस समय वहाँ प्रतापरुद्र राजा थे। वे न केवल पालनादक्ष थे बल्कि शास्त्र मर्मज्ञ विद्वान भी थे। श्रीचैतन्य के बारे में वे सुन चुके थे। साथ ही उनके दर्शन करने की इच्छा भी हुई थी।

जगन्नाथपुरी में वह रथोत्सव का समय था। जगन्नाथ मन्दिर को साफ करने के कार्यक्रम में भाग लेने वह प्रभु वहाँ पहुँचे थे। उत्सव के

अवसर पर उस देश के राजा सोने की झाडू से मन्दिर को साफ करने का आचार था। उस संदर्भ में श्रीचैतन्य परवशतादिव्य तेजस् के साथ नामसंकीर्तन करते हुए उन्हें दिखाई पडे थे। राजा उस चैतन्यमूर्ति से आकर्षित हो गये थे। तुरन्त श्रीचैतन्य के चरणों को नमन किए थे।

उस स्पर्श से स्पन्दित होकर श्रीचैतन्य कहे थे - ''लौकिकशक्ति और महैश्वर्य के प्रतीक का स्पर्श मुझे क्यों हुई थी?''

तब राजा इस प्रकार जवाब दिए थे - ''महात्मा! अगर मेरा साम्राज्य और ऐश्वर्य मुझे आपके चरणों से दूर करेंगे तो मैं उन्हें छोड देने के लिए भी तैयार हूँ।'' इसके लिए कुछ भी जवाब न देने पर राजा फिर से श्रीचैतन्य से दस प्रकार कहे थे - ''महात्मा दीनातिदीन व्यक्ति के लिए जो प्रेम चाहिए मुझे भी वही प्रेम चाहिए और कुछ नहीं चाहिए।''

श्रीचैतन्य राजा से आलिंगन करके अपने पवित्र आँसुओं से अभिषेक किए थे। अपने आशीर्वचनों से और भक्ति प्रबोधों से उन्हें शान्त किए थे। लेकिन राज्य विमुक्त होने के लिए नहीं कहे थे। कर्तव्य निर्वहण के धर्म को छोडने नहीं दिए थे।

तीर्थयात्रा संकल्प

पूरी क्षेत्र में ही अपने शास्त्रीय ज्ञान से निमाई ने सार्वभौम भट्टाचार्य नामक प्रकाण्ड पण्डित को हराया था। वहीं से श्री नित्यानंद पण्डित से गृहस्थाश्रम स्वीकार करवाकर उनके द्वारा ही बंग देश में कृष्ण भक्ति तत्व और हरिनाम महत्व का प्रचार करने के लिए उपयोग किया था। कुछ दिन पूरी क्षेत्र में बिताने के बाद श्रीचैतन्य के मन में तीर्थयात्राएँ करने की इच्छा हुई थी।

हरिबोल हरिबोल

देश भ्रमण और बहुजन दर्शन, ज्ञान - विज्ञान प्रदायक है। श्री चैतन्य अपनी सारी यात्राएँ पूरी से ही पूर्ति किये थे।

चातुर्मास यात्रा के संदर्भ में ही वेंकट भट्ट के पास गोदावरी के दक्षिण प्रांतवासी रामानन्द नामक विद्वान से आध्यात्मिक चर्चाएँ किए थे।

कंचि (कांचीपुरम्) तंजावूर, रामेश्वरम् आदि पुण्यस्थालों का संदर्शन भी किए थे। श्रीचैतन्य इन क्षेत्रों में 'हरिबोल हरिबोल' कहते हुए परवश होकर नृत्य करते हुए क्षेत्र अधिदेवताओं को नमन करके आगे बढ़े थे।

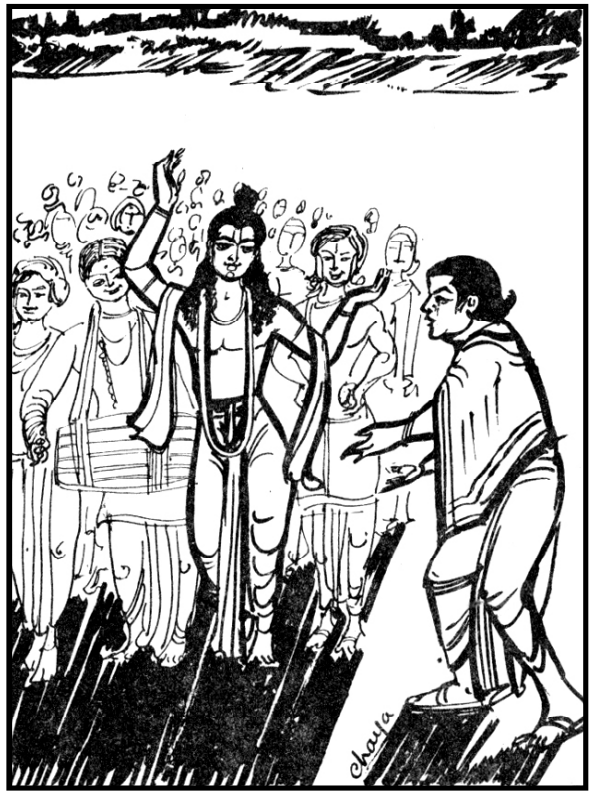

अप्रत्याशित आतिथ्य

श्रीचैतन्य कन्याकुमारी प्रांत में भ्रमण करते समय एक घटना घटी थी। एक दिन उनके समूह को किसी ने भिक्षा नहीं दिया था। साथी शिष्य और अन्य भक्त समूह भूख से तडप रहे थे। तब श्रीचैतन्य कहे थे - ''भक्तों! जब श्रीकृष्ण भगवान है तो चिन्ता क्यों? आप हरिनाम स्मरण करते हुए आगे बढ़िये।'' साथ में खुद वे भी पूरी तन्मयता के साथ हरिनाम स्मरण करते हुए आगे बढे थे। उस परवशता के साथ कितनी देर के लिए आगे बढे थे मालूम नहीं था लेकिन उनके मार्ग पर एक बडा व्यापारी डेरा लगाकर दिखाई पडा था। भक्ति में परवश होकर हरिनाम स्मरणानुरक्त श्रीचैतन्य और उनके भक्तों को सादर आमन्त्रित करके अच्छा सा भोजन परोसा था।

बंगदेश यात्रा

दक्षिण देश यात्रा के बाद पूरी पहुँच गये थे। कुछ समय के बाद बंग देश यात्रा भी किये थे। इस यात्रा में 'रामकेशि' नामक गाँव में 'रूप और सनातन' नामक भाइयों को उपदेश देकर अपने शिष्य बनाये थे श्री चैतन्य। 'रूप और सनातन' गौड देश के नवाब के पास राजपदों पर विराजमान थे। वे दानों श्रीचैतन्य की भक्ति पद्धति से मुग्ध होकर संन्यास ग्रहण किये थे। उनके संन्यासाश्रम के नाम थे 'रूप गोस्वामी' और 'सनातन गोस्वामी।'

वल्लभाचार्य से गोष्ठि

बंगदेश यात्रा के बाद अपने जीवन लक्ष्य बृन्दावन यात्रा के लिए निकले थे श्रीचैतन्य। इस यात्रा में पहले वे काशी और बुद्धगया का भी

दर्शन किये थे। बृंदावन श्रीकृष्ण का लीला केन्द्र था। श्रीकृष्ण लीलाओं के सभी प्रदेशों में वे घूमे थे। मथुरा, गोवर्धनगिरी, नन्दगाँव, राधाकुण्ड, यमुना तट आदि सभी दर्शनीय स्थलों को देखकर तन्मय हो गये थे।

जब श्रीचैतन्य बृन्दावन यात्रा किये थे उस समय बृन्दावन प्रदेश पूरा जंगलमय था। श्रीकृष्ण लीला प्रदेश सब अज्ञात थे। श्रीचैतन्य अपने सात्विकता से उन सभी स्थलों को पहचानकर प्रतिष्ठापित किये थे। श्रीचैतन्य के दर्शन के बाद ही बृन्दावनधाम पुनः प्रतिष्ठित हुई थी।

बृन्दावनधाम को पुनःप्रतिष्ठित करने और प्रेम तत्व के प्रबोध के लिए रूपगोस्वामी को बृन्दावन में रहने का आदेश दिये थे श्रीचैतन्य।

संन्यास के बाद श्रीचैतन्य लगभग आठ वर्ष तीर्थयात्राएँ किए थे। उसके बाद देहावसान तक जगन्नाथपुरी में ही रहे थे।

शिष्यकोटि

कम उम्र में पाण्डित्य और भक्ति परवशता की साधना किये श्रीकृष्णचैतन्य के अनेक शिष्य थे। पहले बताये गये लोगों के अलावा मुख्य थे नित्यानंद प्रभु (निताई उनका व्यावहारिक नाम)। ग्यारह वर्षों में विरक्त हुए निताई नवद्वीप में निमाई का अभिन्न सहचर रहते हुए कृष्ण भक्ति तत्व और नाम महत्व का प्रचार किये थे। नवद्वीप में प्रचारार्थ नियुक्त थे।

दूसरे थे अद्वैतप्रभु। जब चैतन्य सन्यास ग्रहण किये थे उस समय उनकी माता और पत्नी को सांत्वना देकर दीक्षा दिये थे। बताया जाता है कि उनके प्रभाव से ही बंग जनता में वैष्णव भक्ति तत्व प्रसार हुआ था।

हरिदास तीसरे थे। हिन्दु के रूप में जन्म लेकर मुसल्मानों के पोषण में पले थे। बहुत ही कष्ट सहकर हरि नाम स्मरण महत्व का प्रचार किये थे।

उसी प्रकार श्रीवासपण्डित, नरहरि, गदाधर पण्डित आदि अनेक उनके शिष्य बने थे।

सचमुच राधामाधव अवतार ही

नवद्वीप वासी विश्वास किये थे कि श्रीकृष्ण चैतन्य अवतारपुरुष थे। श्रीचैतन्य को श्रीकृष्ण का अवतार के रूप में सर्वप्रथम प्रकट किये थे अद्वैताचार्य। अद्वैताचार्य माध्व सम्प्रदाय के अनुयायी थे। वैष्णवधर्म का प्रचार करनवाले थे। नवद्वीप में घटित घटनाएँ वे श्रीकृष्ण के अवतार मानने के लिए वहाँ की जनता में विश्वास बढ़ायी थीं।

संन्यास ग्रहण करके श्रीकृष्ण चैतन्य बनने के बाद उनका भक्तावेग, विरहवेदना, प्रेम विह्वलता उन्हें न केवल श्रीकृष्ण के अवतार के रूप में ही नहीं बल्कि राधा - कृष्ण के युगल रूप अवतार के रूप में भासित किये थे। माध्वगौडीय भक्तों के लिए श्रीकृष्ण चैतन्य राधामाधवांश संभूत थे।

चैतन्य साहित्य

श्रीकृष्ण चैतन्य साहित्य की रचना ज्यादा तो नहीं किये थे लेकिन चैतन्य सम्प्रदाय साहित्य के लिए आवश्यक नींव डाले थे। संस्कृत, बंगाली, हिन्दी (ब्रज) भाषाओं में प्रचार साहित्य की रचना हुई थी। असामी और उडिया भाषाओं में भी पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है।

चैतन्य धर्म केंद्र

चैतन्य धर्म के लिए मूल स्थानों में अनेक मन्दिर, आश्रम आज भी है। नवद्वीप, शान्तिपुरी, रामकेशि, गयाधाम, जगन्नाथपुरी, प्रयाग, काशी, मथुरा, गोवर्धन, राधाकण्ड, बृन्दावन उनमें मुख्य हैं।

चैतन्य तत्व

अखिलाण्डकोटि ब्रह्माण्डनायक भगवान तीन रूपों में यानी परब्रह्म के रूप में परमात्मा के रूप में और भगवान के रूप में भासित रहते हैं। शास्त्र बताते हैं कि ज्ञान के द्वारा परब्रह्म को, योग के द्वारा परमात्मा को और भक्ति के द्वारा भगवान को पा सकते हैं। भगवान और भक्त के बीच के संबंध तत्व ही भक्ति है।

भक्ति मूलतः दो प्रकार की है। (1) वैदी भक्ति (2) रागाभक्ति। शास्त्रोक्त विधान में भगवान की आराधना करना वैदी भक्ति है अर्थात् पूजाएँ, मन्त्र, आचार नैवेद्य आदि से युक्त आराधना वैदी भक्ति है। भगवान के ऊपर प्रेम भाव से भरी अहेतुक भक्ति (किसी भी प्रकार की इच्छा रहित भक्ति) रागाभक्ति है। इसमें भी दो प्रकार है। ब्रजवासियों की भक्ति रागात्मक भक्ति है तो यशोदा, नंद, गोपिकाओं की भक्ति रागानु भक्ति है। भक्ति के द्वारा मुक्ति पाना ही उसकी चरम स्थिति है।

चैतन्य धर्म सिद्धांतों के अनुसार

(1) श्रीकृष्ण ही परम तत्व है।

(2) इस मार्ग के अनुयायों में अतिशय दीनता, विनय, सहिष्णुता होना चाहिए।

(3) भक्ति साधना में जाति, कौम, वर्ण के लिए कोई स्थान नहीं है। स्त्री पुरुष भेद भी नहीं है।

(4) भक्ति साधना के लिए हरिनाम स्मरण ही साधन है।

(5) साधना में ध्यान और संकीर्तन के लिए प्रमुख स्थान है।

(6) श्रीकृष्ण लीलाओं का ध्यान ही अलौकिक आनन्दत के लिए हेतु है।

(7) चैतन्य संप्रदाय के अनुसार रस रूप में भक्ति ही भक्ति भावना में मुख्य तत्व है। ''भक्ति रसामृतसिन्धु'' नामक ग्रंथ इसको स्पष्ट करता है।

(8) कृष्ण रतिभक्ति रस भावना के लिए पूर्णता प्रदान करती है।

(9) कृष्ण भक्ति की मधुर निष्पत्ति राधातत्व पर आधारित है। ब्रजलीलाओं के लिए प्रेमेश्वरी और ब्रजेश्वरी राधा ही मूल है। राधामाधव प्रेम तत्व ही सही रागानुभक्ति तत्व है।

चैतन्य धर्म के अनुसार आध्यात्मिक चिन्तन मध्व सम्प्रदायनुवर्तनी है। उसके अनुसार भगवान श्रीकृष्ण ही एकमात्र आराध्यदेव है। उनका धाम है बृंदावन। ब्रजगोपी समूह का भक्तावेग ही सही भक्ति के लिए आधार है। श्रीमद्भागवत प्रमाण ग्रंथ है। प्रेमाराधना ही जीवियों का पुरुषार्थ है। मधुर भक्ति के भाव जैसे सख्यता, वात्सल्य और दांपत्य भाव भक्ति के लिए मुख्य आधार हैं।

देहावसान

श्रीकृष्ण चैतन्य अपने अंतिम काल में लगभग १२ वर्ष अचेतन होकर श्रीकृष्ण के विरह में बाह्य संसार से विह्वल होकर बिताये थे। कृष्ण ध्यान में अचेतन होना और उस स्थिति में आँसुओं का प्रवाह अलौकिक आनन्द और भक्तावेग पाना उनके जीवन में नित्यकृत्य थे। लेकिन १२

वर्ष अचेतन स्थिति में ध्यान करना अपूर्व घटना थी। बताया जाता था कि उस समय उनकी आँखों से अश्रुधाराएँ बहती रहती थीं और उनके इर्दगिर्द भक्त लोग श्रीकृष्ण लीलागान करते थे।

उस दशामें एक दिन उन्हें दिव्योन्माद हुआ था। बस उसी उन्माद में वे सागर की ओर दौड पडे थे और सागर उस महामनीषी को अपने में लीन करके पवित्र हो गया था।

पहचाना गया था कि उनका देहावसान ई.सा के १५३३ में हुआ। तब तक उनकी आयु ४८ वर्ष थी।

चैतन्य के भक्ति सूत्र

'कृष्णाष्टक' श्रीकृष्णचैतन्य के भक्तिविषयक सूत्रों के बारे में बतानेवाली रचना है। उसमें उन्होंने अपने हृदयपूर्वक विश्वास किये सिद्धांतों के बारे में बताये थे। उनका समग्र सारांश निम्न दिया गया है।

(1) अपने सोच नामक आईने को साफ करनेवाली, परिवार रूपी अनन्त दावाग्नि को शान्त करनेवाली, कल्याण रूपी कमल को विकसित करनेवाली, विद्या रूपी वधू को जीवन रूप देनेवाली, आनंद रूपी समुद्र को वृद्धि करनेवाली, पग पग पर परिपूर्ण अमृतास्वादन करनेवाली अद्वितीय श्रीकृष्ण संकीर्तन के लिए जय हो।

(2) हे भगवान! आपके अनेक अवतारों में प्रकटित नामावली को आपकी समस्त शक्तियाँ अर्पित हो गयी थीं। उनके स्मरण के लिए कालावधि नहीं है। आपकी कृपा से ही सन्भव हो गया है। लेकिन पीडा का विषय यह है कि मुझमें ही हरिनाम के ऊपर अनुराग नहीं पैदा हुआ है।

(3) इस देह को तृण मात्र समझकर वृक्ष से भी ज्यादा सहनशीलता रखते हुए अपने गौरव और मर्यादाओं के लिए प्रधानता न देते हुए दूसरों को गौरव देते हुए श्रीहरिनाम संकीर्तन करना चाहिए।

(4) हे जगदीश्वर! मझे न धन पर, न जनता पर, न कविता या कामिनियों पर, न किसी अन्य चीजों पर किसी प्रकार की कांक्षा नहीं है। जन्म जन्मातरों में आपके ऊपर मुझमें अहेतुक भक्ति की चाह होनी चाहिए।

(5) हे नंदनंदन! विषयासक्ति से भरी इस पारिवारिक सागर में विकल इस दास पर कृपा दिखाते हुए मुझे आपके चरण कमल धूलि के रूप में मानने की मेरी प्रार्थना है।

(6) हे प्रभु! आपके नाम स्मरण मात्र से कब मेरी आँखों से अनन्त प्रेमाश्रुधाराएँ बहेंगी? कब मेरा कण्ठ स्वर गदगद स्वर में अवरुद्ध होगा? कब मेरा शरीर पुलकित होगा?

(7) हे गोविंदा! आपके विरह में मुझे हर पल एक युग के समान है। आँखों से मूसलाधार बारिश के समान अश्रुधाराएँ बह रही हैं। यह संसार पूरा शून्य की तरह दिखाई पड रहा है।

(8) चरण सेवा में लीन मुझे आलिंगन करने दो या रगडने दो या बिना दर्शन दिए पीडित करो या स्वेच्छाचारी होकर जो चाहे करो लेकिन मेरे प्राणनाथ सिर्फ वे ही हैं और कोई नहीं है।

ओम शान्तिः शान्तिः शान्तिः

* * *